वार्षिक मूल्य 50 रूपये

धर्म जीवन

अगस्त – 2020

- स्वास्तिव यज्ञ के सम्बन्ध में भगवान देवात्मा के उपदेश का सार।
- एक एक देव समाजी का गौरव जीवन की किस अवस्था में है?
- साधारणतः प्रत्येक मनुष्य एक वा दूसरे प्रलोभन से खरीदा जा सकता है।
- कुछ सुन्दर झलकियां।
- राजेन्द्र बाबू के चमकदार पहलू।
- संस्कृति का सच और अश्लीलता पर हल्ला।
- मुझ पर महा हानिकारक अहं का अधिकार।
- महा नीच और अधम आत्माओं के हाथों में उच्च कार्य नहीं रखा जा सकता।

बुराई के साथ कभी समझौता नहीं

"..... मेरी या मेरी समाज की एक या दूसरी प्रकार की सेवा के रूप में तुम मुझे रिश्वत नहीं दे सकते, ताकि मैं तुम्हारी किसी भी बुराई के साथ समझौता करूं। मुझे प्रसन्नता होती है और मैं कृतज्ञ भी हूं उन सेवाओं के लिए जो तुम मेरी और मेरी समाज के लिए करते हो, परन्तु उस का मतलब यह नहीं है कि मैं तुम्हारी या किसी और की नैतिक गिरावट और नैतिक प्रतिज्ञाओं को तोड़ने के प्रति अपनी आंखें बंद कर लूं। मैं दुनियां को खुश करने के लिए नहीं आया हूं बल्कि मैं तो इस लिए आया हूं कि अधिकारी आत्माओं को उन की बुराई या पाप मूलक गतियों, बुरे विचारों, अनुचित बन्धनों और मिथ्या विश्वासों से मोक्ष दूं ओर उन के हृदयों में सात्विक शक्तियां जाग्रत और विकसित करूं ताकि वह नेक और उच्च इन्सान बन जाएं। मेरे जीवन के इस एक मात्र लक्ष्य से दुनिया की कोई ताकत मुझे विचलित नहीं कर सकती। मेरे लिए यह असम्भव है कि मेरे आत्मा में जो उच्चतम शक्तियाँ (देव शक्तियां) पैदा हुई है, मै उन के विरुद्ध जा सकूं।"

1. "भगवान ने फ़रमाया कि कोई धर्म समाज नहीं चल सकती जब तक उसमें यह चीज़ न आवे कि उसको चलाने वाले अपनी गलतीयों को तसलीम करें और उसको दुरस्त करें।" (तसलीम करना और दुरस्त करना तो बहुत दूर की बात है, सुनना भी सहन नहीं कर सकते)
2. "हरेक को मौका हो कि वह बगैर किसी किस्म के दबाब के अपना ख्याल ज़ाहिर कर सकें।" (अपना ख्याल ज़ाहिर करने वाला, इन को अपना महा शत्रू अनुभव न हो)
3. "अच्छी तरह आलोचना हो जिससे तुम लोग किसी अच्छे नतीजे पर पहुंच सको।" (इनकी सच्ची आलोचना करने वाले को देव समाज से काट न दिया जाए)
4. "इस चीज़ की कीमत लगाओ कि एक ही आदमी अगर बदल जावे तो वह ज़्यादा कीमती है, स्कूलों आदि से।"
5. "बुराई के साथ कभी Compromise न करो, जो तम्हें बुरा कहता है उसको बुरा कहने दो।"
6. "पहले से कुछ अधिक पवित्र नहीं होते, तब तक समाज की उच्च श्रेणीयों में प्रवेश नही कर सकते।" (पहले से अधिक नीच बनने पर उच्च श्रेणी में न किया जाए)
7. "मैं और मेरा मिशन दो अलग-2 चीज़ें नहीं, किन्तु एक ही हैं।"
8. "यह नहीं हो सकता कि धर्म के विरुद्ध तुम किसी की सहायता करो, किसी के बुरे कार्य में सहायक भी बनो और देव समाज के मैम्बर भी रहो। यदि तुम उनकी मदद करोगे तो हम तुम्हें सेवक नहीं रख सकेंगे, यह अब तुम्हारे लिए है कि दोनों में से किस बात को ग्रहण करते हो।"
9. "अगर हृदय न बदलें तो, सुनना-सुनाना किस काम का? सुनना-सुनाना मक़सद नहीं ज़रीया है।" (सुनना-सुनाना ही देव समाज का मक़सद न हो)
10. "सिर्फ़ सभाऐं कराने से हृदय परिवर्तन विभाग का कार्य नहीं हो जाता।"
11. "हमको सदा ही भय रहता है कि कहीं Sentimentalism न आ जावे, अर्थात तुम्हारे साधन खियाली न हो जावें। हमारी समाज में साधन मुसलमानों की नमाज़ न बन जावें, जिस पूजा का कोई फल नहीं।
12. "जिन जनों ने हमारी या सत्य और शुभ की विरोद्धता की है, आत्मा के विचार से नीचे जाने के अतिरिक्त उनका इस दुनियां में बहुत बुरा हाल हुआ है, इस दुनियां में भी उन्हें उसका फल मिल गया है। इसलिए कुछ कहा नहीं जा सकता कि कब ऐसे हालात पैदा हों, कि वर्तमान विरोधियों को भी इस दुनिया में ही वह हालात ख़्वार और जलील कर दिखावें।"
13. "..... न्याय भाव क्या? किसी के सम्बन्ध में हृदय में पक्षपात रहित होकर कोई क्रिया करना।"

धर्म जीवन

खण्ड 31 अंक 8
अगस्त – 2020
वार्षिक मूल्य 50 रुपये

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

स्वास्तिव यज्ञ के सम्बन्ध में भगवान देवात्मा के उपदेश का सार

आज का व्रत स्वास्तित्व यज्ञ का व्रत है। स्वास्तित्व यज्ञ का आज अन्तिम दिन है। स्वास्तित्व का अर्थ है अपना अस्तित्व। अस्तित्व क्या? जो कुछ हम हैं, जो कुछ हमारी हस्ती है। हम क्या हैं? बाहर से देखकर अपने स्थूल शरीर को अनुभव करते हैं, कि एक चीज़ है, जिस को शरीर कहते हैं। यह भी अनुभव करते हैं, कि हम केवल शरीर नहीं, हम अपने भीतर नाना प्रकार के भाव उत्पन्न करते हैं, अथवा रखते हैं, हम ज्ञान रखते हैं और ज्ञान प्रकाश करते हैं। यह शरीर सब कुछ नहीं। यूं भी हम अपने भीतर अनुभव सकते हैं, कि हम शरीर नहीं और ऐसा ही हम प्रकाश भी करते हैं। मेरा हाथ, मेरा कान, मेरा पांव, मेरा सिर, मेरा पेट, जिस से हम प्रगट करते हैं, कि हम कुछ और हैं। इन चीज़ों को अपना प्रगट करने से प्रकाशित होता है, कि हम इनसे अलग हैं। इसी को साधारण लोगों में जहां धर्म विषयक कोई ध्यान पैदा हुआ है, उसे आत्मा कहते हैं। शरीर और आत्मा को लेकर हमारा अस्तित्त्व है। अब जिस शरीर और आत्मा को लेकर हमारा अस्तित्व है, क्या उस अस्तित्व की रक्षा हम को पसन्द है, क्या उसकी रक्षा हम चाहते हैं? हां, इस में क्या सन्देह है, कि हम अपने अस्तित्व की रक्षा चाहते हैं। केवल यही नहीं, कि मनुष्य अपने अस्तित्व की रक्षा चाहता है, कि जिसको कुछ पता भी हो सकता हैं, कि मेरा यह अस्तित्व क्या है – आत्मा क्या है और शरीर क्या है – किन्तु जिनके भीतर ज्ञान नहीं, जिन के भीतर बोध नहीं, अथवा नाना प्रकार के पशु और पक्षी, नाना प्रकार के जीवधारी, वह भी अपने अस्तित्व की रक्षा चाहते हैं। एक 2 छोटे से छोटा कीट भील जब उस पर आक्रमण होता हो, तो भाग जाना चाहता है, छुप जाना चाहता है, यहां तक कि वह बुरे से बुरे जीव भी कि जो केवल विनाशकारी हैं, केवल हानिकारक हैं, जिन की आवश्यकता भी कुछ नहीं, अपनी रक्षा चाहते हैं। यहां तक कि सांप और बिच्छु मरना नहीं चाहते। सांप को मारने जाओ, तो वह भाग जाता है। किसी छेद में यदि उसका ज़रा सिर चला गया हो, तब यदि उसकी दुम पकड़कर खींचना चाहो तो वह ज़ोर लगाता है, कि किसी तरह बाहर न निकलूं, किसी तरह से कुचला न जाऊं। यह जैसा स्वभाविक है, वैसे ही इस यज्ञ का जो आज समाप्त होता है, यही उद्देश्य है, कि अपने अस्तित्व की रक्षा ओर उसका विकास हो। जैसे और अनेक यज्ञों का उद्देश्य है, कि वह जिस सम्बन्धी के विषय में है, उस के सम्बन्ध में हमें जो

कुछ करना उचित है, उनका हमें ज्ञान दे, हमें उसके विषय में कर्तव्य कर्मों और वर्ज्जित कर्मों का बोध दे, जिससे वह सम्बन्धी हमारे लिए और हम उसके लिए हितकारी सम्बन्धी बन सकें, वैसे ही स्वास्तित्व यज्ञ का भी यही लक्ष्य है, कि हम अपने अस्तित्व विषयक रक्षा और उसके विकास का बोध लाभ करें। यह उद्देश्य सुन और जानकर भी क्या कोई अपने अस्तित्त्व की रक्षा और विकास कर सकता है? नहीं, उसका अपना अलग नियम है। शरीर की रक्षा चाह कर भी यदि हमें खाने को न मिले, पीने को न मिले, तो हमारा शरीर सुरक्षित नहीं रह सकता। इसी कारण से पिछले दिनों हमारे देश में लाखों आदमी मर गए। वृष्टि के न होने से अन्न उत्पन्न न हुआ, बहुत सी जगहों में पीने का पानी तक न मिला। जब आनाज हि न मिला, पानी न मिला, तो जानकर भी कि उन्हें शरीर की रक्षा करनी चाहिए वह जी न सके, किन्तु मर गए। इस समय भी मर रहे हैं।

पहले तो यह जानने की आवश्यकता है, कि हम किस वस्तु की रक्षा करें, और किस तरह से अपने आप को बचाएं? हम स्थूल शरीर रखते हैं, परन्तु क्या हम उसको सदा रख सकते हैं? नहीं रख सकते। यह शरीर चाहे भूख से मरे, चाहे किसी रोग वा पीड़ा से मरे और चाहे किसी छत के नीचे आकर मरे, वा किसी और दुर्घटना से मर जाए, यह शरीर मरने के लिए है। स्थूल शरीरधारी राजा हो वा प्रजा हो, उसकी मौत सब के लिए एक जैसी है। इस से आगे क्या है? जो मूर्ख हैं उनके लिए भी अन्धकार, जो मूर्ख नहीं, परन्तु विद्वान, धनवान, और सुसभ्य हैं, उनके लिए भी अन्धकार। उनके भीतर कई प्रकार की कल्पनाएं हैं, जिन में से एक कल्पना यह है, कि आत्मा रहता है और हमेशा रहता है। बड़े बड़े मत पृथ्वी पर प्रचलित हैं, प्राय: वह सभी कहते हैं, कि आत्मा रहता है और शरीर ध्वंस हो जाता है। कोई उसको सदा के लिए स्वर्ग में भेजकर उसको वहां रखते हैं अर्थात इस वा उस मत के मानने से वा इस बात के स्वीकार करने से वा इस वा उस आडंबर के धारण करने से वहां आत्मा चला जाएगा और वहां रहेगा। कोई समझते हैं, कि सदा के लिए कोई नरक स्थान है, और जो इस बात को नहीं मानते वा यह स्वीकार नहीं करते वा इस मत पर नहीं चलते, वा नहीं चलना चाहते, वह सदा के लिए उस नरक स्थान में रहेंगे। कोई समझते हैं, कि जब हम यह शरीर छोड़ेंगे, उसके बाद हम अपने कर्मों के अनुसार फिर इसी पृथिवी पर मनुष्य, गाए, बैल, कुत्ते, गधे, सांप, बिच्छू, बिल्ली, बकरी, वृक्ष, घास आदि का जन्म धारण करेंगे। ऐसे सब ख़याल केवल कल्पनाएं हैं। इस पृथिवी के लोग इस समय तक कल्पना आदि के द्वारा यहां तक ही पहुंच सकते थे। परन्तु यह स्वास्तित्व यज्ञ बतलाता है, कि जैसे शरीर के नियम हैं वैसे ही आत्मा के नियम हैं। पहले लोगों की दृष्टि यहां तक पहुंची, कि विनाश और विकास के नियम केवल शरीर पर ही काम करते हैं। एक एक बच्चे को देखते हैं, कि वह बराबर बढ़ता चला आता है, हड्डी पट्ठे आदि मांस सब कुछ बलवान होता चला जाता है। ऐसा हि पशुओं और वृक्षों में भी देखते हैं। इसके साथ यह भी देखते हैं, कि कोई खाते और पीते हैं, परन्तु फिर भी घटते चले जाते हैं। यहां हमारे आश्रम में एक नव युवक और उसका पिता रहते हैं, दोनों एक साथ खाते पीते हैं, एक जगह रहते हैं, एक हि हवा में सांस लेते हैं, परन्तु फिर भी एक की ताक़त बराबर बढ़ रही है और एक की घट रही है। जो बेटा है वह दिनों दिन बढ़ता जाता है, जो पिता है वह घट रहा है। जो अस्तित्व घट रहा है, यदि उसका यह क्रम बन्द न हो तो यह निश्चय नष्ट हो जाएगा, घटते 2 ऐसी अवस्था को प्राप्त होगा, कि जिस को मौत कहते हैं। जैसे शरीर के विषय में हम यह

दोनों बातें देखते हैं, वैसे हि आत्मा के विषय में भी देख सकते हैं। एक 2 आत्मा जो दिनों दिन नीच से नीच होता चला जाता है, वह विनाश को प्राप्त हो रहा है, और एक 2 आत्मा जो उच्च से उच्च बनता जाता है, वह विकास को प्राप्त हो रहा है। शरीर के विषय में तो लोग जानते हैं, कि शरीर के लिए बचपन का समय और, जवानी का और बुढ़ापे का समय है। वह उसके बढ़ने और घटने को तो देखते हैं, परन्तु आत्मा को छोड़ देते हैं। सारी नेचर के भीतर परिवर्तन का नियम काम कर रहा है। उसके अनुसार घटते वा बढ़ते रहना आवश्यक है। शरीर के लिए तो यह नियम माना जाता है, और उस की मृत्यु भी देखते हैं, परन्तु आत्मा के लिए मृत्यु नहीं मानी जाती। विश्व व्यापक जो नियम है, उसको आत्मा से अलग कर देते हैं, केवल इसलिए कि आत्मा के विषय में जो कुछ उनका ज्ञान, जो कुछ उनका धर्म, जो कुछ उनका परलोक, जो कुछ उनका स्वर्ग, जो कुछ उनका नरक है, वह सब कुछ कल्पना मूलक है। देव धर्म की शिक्षा कल्पना मूलक नहीं, वह विज्ञान मूलक है। मनुष्य अस्तित्व के विषय में जो विज्ञान मूलक नियम है, उन पर वह स्थापित है। यह इस पृथिवी के लिए पूर्णत: नई ज्योति है। किसी ने आत्मा के विषय में आज तक ऐसा ज्ञान लाभ नहीं किया। जिन्होंने आत्मा को माना है, उसे अविनाशी माना है, इसलिए उनके सन्मुख विनाश और विकास के दोनों नियम नहीं आए। यदि कोई आत्मा विनाशकारी नियमों के अधीन है, यदि उसकी गति नीच गति है, तो चाहे वह कुछ ही मानता रहे, वह अवश्य मर जाएगा। यदि किसी के भीतर रोग है, वह उसको माने वा न माने, यदि वह दूर न हो तो वह अवश्य उसे विनाश कर देगा। इसलिए इस सत्य से वंचित रहकर विनाश और विकास के नियमों को न पहचान कर सैंकड़ों आत्मा वनिष्ट हो रहे हैं, "जीवन पथ के नेता के बिना लाखों विनष्ट होते हैं"। तब यदि आत्मिक जीवन की रक्षा करनी हो, कि जो हमारे अस्तित्व में सत्य और सार वस्तु है, तो यह मालूम होना चाहिए, कि उसकी रक्षा कहां है और किस प्रकार हो सकती है? जो आत्मा अपनी अवस्था में सात्विक भावों को प्राप्त नहीं होता उसके भीतर उच्च गति आरम्भ नहीं होती, उसका विनाश हो जाना अवश्यम्भावी है। यह नाना प्रकार की उच्च शक्तियां कहां से लाभ होती हैं, इसका जानना अति आवश्यक है। यदि वह लाभ न हों, तो मनुष्य किसी मत में हो, किसी विश्वास का हो, कुछ ही स्वीकार करता हो और कुछ ही अस्वीकार करता हो, धीरे–2 उसका विनष्ट हो जाना घुल 2 कर मर जाना, सम्पूर्ण रूप से विनष्ट हो जाना अवश्यम्भावी है। यदि यह आवश्कता बोध हो जाए, कि हमारे अस्तित्व की रक्षा के साथ हि हमारे सब प्रकार के सुख और स्वाद सम्बन्धित हैं, तो फिर उसकी रक्षा विषयक ज्ञान पाने और उसके अनुसार चलने की आवश्यकता बोध हो। यह मान लेना यथेष्ट नहीं कि यह शरीर मर जाएगा और आत्मा रहेगा। शरीर का ज्ञान भी बड़ा ज्ञान है, उसका बोध भी बड़ा बोध है। मेडिकल कालेज में एक 2 लड़के के पाच 2 वर्ष व्यतीत होते हैं, हमारे डाक्टर हरनाम सिंह जी के भी पांच वर्ष लगे हैं। इन पांच वर्षों में क्या पढ़ते रहे? केवल शरीर के विषय में ज्ञान लाभ करते रहे। पेट के अन्दर क्या 2 कुछ होता है। शरीर के क्या 2 अङ्ग और प्रत्यङ्ग हैं, और उनका क्या 2 कार्य है। क्योंकर एक 2 रोग पैदा होता है, और क्योंकर वह दूर किया जा सकता है। इस पहलु में भी यदि अभी तक बहुत थोड़ा ज्ञान आया है, तथापि इस थोड़े से ज्ञान के लिए भी वर्षों व्यतीत होते हैं। आत्मा का ज्ञान इससे भी कठिन है, क्योंकि वह सूक्ष्म है। उसका अपना ज्ञान सूक्ष्म है, उस सूक्ष्म ज्ञान के लिए सूक्ष्म दृष्टि की आवश्यकता है, जो बहुत कठिन है।

केवल यह कहना कि मैं आत्मा हूं, और बात है, परन्तु उसका ज्ञान पाना हो, तो उसके लिए बहुत बड़े समय की आवश्यकता है। यदि यह जानना हो कि आत्मा क्या और उसका विनाश और विकाश क्या, उसकी नीच गति और उच्च गति क्या, तो यह बहुत कठिन और बहुत लम्बे समय का काम है। देव धर्म की शिक्षा इसी उद्देश्य को लेकर है। यह शिक्षा जीवन विषयक है, यदि यह पता लग जाए, कि जब तक हमारे भीतर सात्विक शक्तियां जाग्रत नहीं होती, तब तक हमारा कल्याण सम्भव नहीं, उच्च गति सम्भव नहीं, यह यदि समझ में आ जाए कि कहां से और किस की शरण से यह ज्ञान और जीवन मिल सकता है, और आत्मा जो नीच शक्तियों के अधीन है, (कितने हि आत्मा यह भी नहीं जानते कि वह नीच शक्तियों के नीचे हैं; जो सेवक बन चुके है उन सब के लिए भी हम, यह नहीं कह सकते कि उन को नीच गति का बोध हुआ है।) जिसने बचपन से मांस नहीं खाया इसलिए व मांस नहीं खाता, इससे यह अभिप्राय नहीं कि उनको अपनी नीच गति का कोई बोध हुआ है। संस्कार के कारण यह कहते है, कि ऐसा करना पाप है। असल में पाप क्या है, यह कोई पता नहीं। (औरों को नीच गति का बोध कहां पैदा हो सकता है, जब अपनी हि नीच गति का बोध नहीं। ऐसी अवस्था में रहकर वह रक्षा क्योंकर पा सकते हैं) उसकी क्योंकर उन से मोक्ष हो सकती है, सब आत्मा के लिए आगे मार्ग खुलने की आशा है। परन्तु ऐसी समझ रखने वाले बहुत थोड़े जन हैं, हां, ऐसी समझ वा ऐसे बोध के अधिकारी भी बहुत थोड़े हैं। कुछ दिन पहले हम एक आत्मा को एक तत्व बतलाते है, उसके हृदय तक कोई ज्योति की किरण पहुंचाते हैं, वहा आत्मा थोड़े दिनों के बाद या तो फिर बेसुध हो जाता है, वा घमंड से भरकर हमारे पास उस विषय में इस प्रकार वर्णन करता है, मानो वह हमें सिखलाता है। बहुत थोड़े ऐसे आत्मा हैं, कि जो इस प्रकार की अवस्था में से निकलकर सच्ची जीवन दायक ज्योति पाने के अधिकारी होते हैं, प्रत्येक इसका अधिकारी नहीं। आत्म ज्ञान, विशुद्ध ज्ञान अथवा जीवन ज्योति का कोई 2 अधिकारी मिलता है। फिर उस के लाभ के अपने अटल नियम हैं। जो कुछ लाभ होगा वह नियम के अनुसार होगा। हम चाहें वा न चाहें, जो कुछ होगा नियमों के साथ होगा। किस प्रकार हमें अपने अस्तित्व का ज्ञान हो, कि हम क्या हैं, किस अवस्था में है। उच्च बोध और उच्च शक्तियां क्या हैं? और वह बोध शक्तियां हमें किसके साथ जोड़ती हैं? यह मूल्यवान ज्ञान पाने की आवश्यकता है। जब हमारे भीतर कोई बोध उत्पन्न होता है, तो वह हमें किसी चीज़ वा जन के साथ जोड़ता है। प्यास का यदि बोध होता है तो हम पानी के साथ जुड़ते हैं, भूख का बोध होता है तो हम आहार के साथ जुड़ते हैं, खाने की वस्तु को ढूंढते हैं। अब यदि किसी के भीतर जीवन लाभ की अभिलाषा हो, उच्च गति के लाभ की आकांक्षा हो, मृत्यु से वह रक्षा चाहकर जीवन पाने का इच्छुक हो, तो उसे कहां जुड़ना चाहिए? कौन वह ऐसा सम्बन्धी है, जहां से उसके इस बोध की तृप्ति हो, उसके सामान की प्राप्ति हो। हां, हमारी यह अभिलाषा संसार में और कहीं पूरी नहीं हो सकती। यह जीवन लाभ की अभिलाषा जीवन दाता से हि पूरी होगी। जो आत्मा अन्धकार ग्रस्त है, नीच हैं, नीच गति के राही हैं उनका विनाश हो जाना अवश्यम्भावी है। यह पता लग भी जाए, कि यह विकास का मार्ग और यह विनाश का मार्ग है, यह नीच गति है और यह उच्च गति है, तो भी जब तक जो आत्मा उच्च सूत्रों की बिना पर जीवन दाता की शरण को प्राप्त नहीं होते, उनके साथ प्रीति पूर्वक बन्ध नहीं सकते; तब तक उनका कल्याण सम्भव नहीं।

एक एक देव समाजी का गौरव जीवन की किस अवस्था में है?

(पी. वी. कनल)

कुछ दिन हुए मेरे पास एक जन मिलने के लिए आया। वह मुझे कहने लगा, कि आपकी समाज का एक नौजवान आज कल ऐसे पद पर नियुक्त है, कि जिसकी बदौलत अगर वह चाहे तो हजारों रुपए कमा सकता है। परन्तु वह किसी से एक कौड़ी नहीं लेता। मन्डियों के कई आदमी न केवल उससे बहुत खुश हैं, बल्कि उसको दुआएं देते हैं। जब कोई उस नौजवान का नाम लेता है, तो सुनने वाले जन कह उठते हें, कि वह देव समाजी है और देव समाजी से हमें ऐसी ही उम्मीद रखनी चाहिए। इस दयानतदारी के उच्च भाव से उसने न केवल अपना गौरव बढ़ाया है, किन्तु अपनी हितकारी और प्यारी देव समाज का भी गौरव बढ़ाया है। हां प्रत्येक देव समाजी से देव समाज ऐसी ही उम्मीद रखती है।

एक बार और देव समाजी के सम्बन्ध में एक गैर देव समाजी ने शिकायत की। उसने यह कहा कि अमुक आपका देव समाजी अपने पेशे में ऐसा साफ जीवन नहीं रखता, जिस प्रकार कि हम हर एक देव समाजी से उम्मीद रखते हैं। एक तो वह मजदूरों के साथ न्याय नहीं करता। उनके साथ मज़दूरी नियत कर लेता है और काम खत्म होने के बाद उनको कम मजदूरी देता है, और यह बहाना करता है, क्योंकि उन्होंने मेरी तसल्ली के अनुसार काम नहीं किया। उनके जीवन की दूसरी जो घटना उसने सुनाई वह यह थी, कि एक मुसलमान रईस के साथ उसका लेन देन का काम चलता था। वह एक बार भूलकर हिसाब में 400 रुपए अधिक दे गया, तो इस गैर देव समाजी ने कहा कि मैंने आपके देव समाजी साथी को कहा कि यह रुपए वापिस करो, तो इस सेवक ने कहा, कि तुम्हारे सामने ही यह मुसलमान रईस कई बार सैकड़ों रुपए मुझ से छुड़ा कर ले गया है, क्या हुआ अगर वह 400 रुपए अधिक दे गया। वह 400 रुपए मेरे ही थे, जो मुझे दे गया है। खैर इस देव समाजी ने वह 400 रुपए वापिस तो किए परन्तु जिचबिच होकर किए। इस देव समाजी की यह अवस्था बहुत शोचनीय थी। ऐसे कर्मों के कारण ही बाद में यह देव समाज का सेवक न रहा। वह गैर देव समाजी कहता था, कि हर एक देव समाजी से हम यह उम्मीद रखते हैं, कि वह लेन देन के मामले में दुनियां की तुलना में बहुत अधिक दयानतदार और साफ रहेगा। यह सच है। देव समाज का गौरव वही जन बढ़ाएंगे, जो जन लेन देने के मामले में दुनियां की तुलना में बहुत ऊंचा दृष्टान्त दिखाएंगे।

श्रीमान भाई मोहन देव जी पर सारे सिन्ध को ही यह अभियान है, कि वह अपने लेन देन के मामलों में गैर मामूली दयानतदार थे। भाई साहिब के एक बहुत बड़े भारी दुश्मन ने मुझे कहा, कि भाई साहिब अपने पैसे के सम्बन्ध में कुल प्रतिज्ञाओं पर गैर मामूली तौर पर दृढ़ रहते थे। और अगर उन्होंने मुझे मंगलवार के दिन दस बजे पैसे देने होते थे, तब वह सोमवार को तो शायद दे दें, परन्तु यह कभी नहीं हुआ कि वह मंगलवार के दस बजे के बाद दें। इसी प्रकार जो भी सिन्धी उनको जानते थे, वह यह शहादत देते थे कि वह इस कद्र सच्चे आदमी थे, कि न केवल झूठ नहीं

बोलते थे, किन्तु लाग लपेट करके भी बात नहीं करते थे। वह निष्कपट और सरल थे। इसी प्रकार जो भी सिन्धी भाई साहिब को जानते थे, वह उनको सदा स्त्रियों के सम्बन्ध में अनोखे रूप से पवित्र पाते थे। श्रीमान भाई साहिब जी ने देव समाज का गौरव कितने लेखों से नहीं बढ़ाया, न लैक्चरों के द्वारा बढ़ाया, जितना कि अपने पवित्र जीवन से बढ़ाया।

इस प्रकार एक मुसलमान पठान देव समाज की तरफ आकृष्ठ हुआ। मैंने उनके आकृष्ट होने का उससे कारण मालूम किया। वह कहने लगा कि मैं पठान हूं, और हम लोग बहुत गौरव वाले हैं। आपका एक देव समाजी डाक्टर इस कदर पाक और पवित्र है, कि हम तो बिना झिझक के उनको अपनी स्त्रियों को देखने के लिए बुला लेते हैं, और मैं अपने मुसलमान भाईयों को कहता हूं कि तुम अपने सारे शहर के भीतर एक जन भी ऐसा बताओ कि जो डाक्टर जैसा पवित्र हो और मेरे सारे मित्र इस बात को स्वीकार करते हैं, कि इस पहलू में यह डाक्टर साहिब अपना सानी आप हैं। दुनियां प्रत्येक देव समाजी से यही उम्मीद रखती है, कि वह स्त्रियों के सम्बन्ध में पूर्णत: पवित्र दृष्टान्त प्रदर्शन करे। यह सच है कि देव समाज के भीतर कई ऐसे जन आए कि जो इस पहलु में अपनी कमजोरी के कारण गिर गए। क्या ऐसे जनों ने अपने नीच जीवन से देव समाज का गौरव बढ़ाया या कि देव समाज के अति सुन्दर रूप को बट्टा लगाने का कारण बने?

श्रीमान् भाई अतर सिंह जी एक रियासत के मैनेजर थे। उस रियासत के मामले में वह अपने आपको इस कदर पवित्र और शुद्ध रखते थे, कि दुनिया देख कर दंग रहती थी। सारी रियासत की सारी जमीन में से घास का एक तिनका या एक भी छल्ली या दाना मुफ्त में अपने घर में आने देना पसन्द नहीं करते थे। जब कभी रियासत की रानी ने अपने किसी त्योहार पर भाई साहिब को कुछ भेजा, तब भाई साहिब ने उसे स्वीकार तो किया परन्तु उसके दाम अपने पास से लगाकर रियासत के हिसाब में जमा कर दिए। दुनियां देव समाज से इसी प्रकार की उम्मीदें रखती है, और उस प्रकार की दयानतदारी से भाई साहिब ने न केवल अपना गौरव बढ़ाया किन्तु देव समाज का गौरव भी बढ़ाया।

सरदार साहिब श्रीमान सावन सिंह जी के जीवन की भी ऐसी कई घटनाएं हैं कि जिन में उन्होंने कई प्रकार से औरों की सेवा की है। एक स्थान में उन्होंने ऐसे दो फिरकों का मामला निपटाया जो आपस में लड़ झगड़ कर उजड़ जाते। वह मामला फूक मारने से नहीं निपटाया, किन्तु वह एक और देव समाजी को साथ लेकर वहां जाकर कितने दिनों तक ठहरे और उन दोनों फिरकों की जमीन और हिसाबों की अच्छी तरह से पड़ताल करके उन दोनों को ऐसी अवस्था में लाए, कि वह उजड़ने से बच गए। दुनियां देखकर पुकार उठी, कि देव समाजियों से ऐसी ही उम्मीद हो सकती थी। यह परमार्थी जन हैं, जिस का मतलब यह है कि दुनिया में लोग देव समाजियो के जीवन से ऐसी आशा रखते हैं, कि वह स्वार्थी प्रमाणित नहीं होंगे, किन्तु पर की सेवा में खुशी और तृप्ति लाभ करेंगे। तब किसी देव समाजी का स्वार्थ परता का जीवन व्यतीत करना देव समाज के गौरव को बढ़ाता नहीं, किन्तु उसको बट्टा लगाता है।

सरदार साहिब श्रीमान सावन सिंह जी के जीवन में इस प्रकार का दृष्टान्त लगातार मिलता रहा है, कि उन्होंने अपनी सारी नौकरी के समय में उन्नत होने के लिए आप कोई प्रार्थना नहीं की, अपने जीवन को उन्होंने ऐसा कीमती और ऐसा निष्काम भावी

बनाया, कि उनके अफसर उन पर मोहित थे, और उन्हें आगे से आगे ले जाने में खुशी लाभ करते थे।

वह हैरान रहते थे, कि उनको एक ऐसे नेक जन को देखने का अवसर मिला, जिनके भीतर बड़ाई की कोई भूख नहीं, और नाम और यश का कोई अधिकार नहीं। वह अपना कर्त्तव्य पालन करते और औरों के लिए सेवाकारी होकर बहुत खुशी लाभ करते थे। सरदार साहिब के खिताब के लिए वह मारे मारे नहीं फिरे, वह खिताब उनके अफसरों ने उनको खुद ही अता किया। दुनिया देव समाजियों से यह उम्मीद नहीं रखती, कि वह संसार के जीवों की न्याई मान बड़ाई और नाम के भूखे होकर मारे मारे फिरें, किन्तु यह आशा करती है, कि वह पर सेवा में ही अपनी शान्ति और अपना सुख ढूंढेंगे।

भगवान देवात्मा के जीवन से जो जन वाकिफ हैं, वह देव समाज के मैम्बरों से यह आशा रखते हैं, कि वह औरों की खुशी में खुशी का अनुभव करने वाले होंगे। ईर्ष्या ओर द्वेष से पूर्णत: मुक्त होंगे। इसके भिन्न वह दुश्मनों के गुणों को भी स्वीकार करने में खुशी लाभ करेंगे। घमंड और नीच घृणा से पाक होंगे। इसलिए जब गैर देव समाजी जन किसी ऐसे देव समाजी के जीवन में जिसको वह जानते हैं, अपने ही साथियों के सम्बन्ध में नीच घृणा प्रदर्शन करते हुए देखते हैं, तब वह हैरान होते हैं, कि क्या ऐसे जन भी देव समाजी हैं, और भगवान देवात्मा के शिष्य हैं? तब दुनिया देव समाजियों से यह उम्मीद रखती है कि वह स्त्रियों के सम्बन्ध में बहुत पवित्र और नेक हों, वह लेन देन के मामलों में दयानतदार और लालच से रहित हों, औरों के सम्बन्ध में सेवा करने के लिए तैयार हों। घमण्ड, ईर्ष्या, द्वेष, नीच घृणा और अन्य बुराइयों की गुलामी से बहुत बड़ी हद तक मुक्त और कुल जगत् के सुख में सुख लाभ करने वाले और दुख में दुख अनुभव करने वाले हों। इसलिये हम सबको अपने आप से ही प्रश्न करने की आवश्यकता है, कि हम कहां तक दुनिया की उपरोक्त आशाओं को पूरा कर रहे हैं, और कहां तक देव समाज के गौरव को बढ़ा रहे हैं। और कहां तक अपने देवात्मा गुरु के सच्चे शिष्य प्रमाणित हो रहे हैं।

सूचना

धर्म जीवन सम्बंधी हर प्रकार की जानकारी के लिए, चंदा आदि भेजने, कोई मैटर आदि भेजने के लिए साथ लिखे पते पर सम्पर्क करें या लिखें। : -श्रीमान बलदेव सिंह जी

House No. 3154, Sector 21-D,
Chandigarh - 160 022
Phone : 0172 - 4638229,
2716914

देव समाज के अकाउंट का पता इस प्रकार है।

DEV SAMAJ (G)
Central Bank of India, Sector 22, Chandigarh
Account No. : 3702002919 | IFSC Code : CBIN0280414

साधारणतः प्रत्येक मनुष्य एक वा दूसरे प्रलोभन से खरीदा जा सकता है

श्रीमान् परशुराम जी की कनल एम. ए. एल. एल. बी. ने एक दिन सम्मिलित सभा कराते हुए फरमाया, कि :-

इंगलैंड़ के एक मशहूर प्राइम मिनिस्टर ने एक बार कहा था, कि एक एक मनुष्य की अलग अलग कीमत होती हे, कि जिस से वह खरीदा जा सकता है। कोई सौ रुपए से खरीदा जा सकता है, कोई हज़ार रुपए से, कोई लाख रुपए से और कोई मान बड़ाई से खरीदा जा सकता है वा कोई बिरादरी से खरीदा जा सकता है। कोई सम्बन्धियों के मोह से खरीदा जा सकता है और कोई किसी और वासना के विषय से खरीदा जा सकता है। अपने इस ब्यान को उपस्थित जनों के दिलों पर नकश करने के लिए सभापति जी ने निम्नलिखित दृष्टान्त पेश किए :-

(1)

एक बहुत बड़ा अंग्रेज जज था, वह अपनी दयानतदारी के लिए मशहूर था। एक बार उसके पास एक बहुत बड़े दौलतमन्द का मुकद्दमा आया, चूंकि वाक़यात दौलतमन्द के विरुद्ध जाते थे, इसलिए उस को विश्वास था, कि मेरा मुकद्दमा खारिज हो जाएगा। इस को यह मालूम था, कि जज रिश्वत नहीं लेता, परन्तु वह यह भी जानता था, कि साधारणतः मनुष्य की ईमानदारी की हद होती है, चूंकि उस को उस की अवस्था से ज्यादा प्रलोभन दिया जाये, तो वह फिसल सकता है, इसलिए उस ने जज को पचास हज़ार रुपए की रिश्वत पेश की, (पुराने ज़माने की बात है, जब एक रुपये की भी बहुत क़ीमत थी) जिस को देखकर जज के मुंह में पानी भर आया। और उस ने वाक़यात दौलतमन्द के विरुद्ध होने के बावजूद भी फैसला उस के हक में कर दिया। चूंकि वाकयात बहुत साफ थे, उस को डर था, कि कहीं उस पर मुकद्दमा न चलाया जावे, इसलिए वह पचास हजार रुपए रिश्वत में लेकर उस नौकरी से इस्तीफा देकर विलायत का चला गया।

(2)

एक सेशन जज के पास एक बहुत बड़े अमीर के रिश्तेदार का मुकद्दमा आया, जिन को नीचे की कोर्ट ने सेशन के सुपुर्द कर दिया था, अब सेशन जज के लिए उन को सज़ा न देना कोई आसान काम न था, क्योंकि मुलज़िमों के विरुद्ध सबूत काफ़ी था। लेकिन जब जज साहिब के सामने एक सेर(लगभग एक किलो) सोने का लालच पेश किया गया, तब उस को देखकर उनकी आंखें फूल गईं, और वह तत्काल बदल गए और सेर सोना लेने और मुलज़िमों को छोड़ने के लिए तैयार हो गए।

(3)

अमेरीका में एक बहुत बड़ा ईमानदार जज था, वह अपनी ईमानदारी के लिए सारे देश में मशहूर था। उसकी एक ही लड़की थी, जो उसके घर से किसी के साथ भाग गई थी, और उसने अपने उसी मित्र के साथ शादी कर ली थी। एक बार इसी लड़की की इज्जत पर एक और जन ने हमला किया, जिस पर उसके पति ने हमला करने वाले को कतल कर दिया। मुकद्दमा लड़की के पिता की अदालत में पेश हुआ। अफसर कहते थे, कि मुलज़िम बेगुनाह है, लेकिन जज अफसरों की राय की कुछ परवाह न करते हुए मुलज़िम को फांसी की सजा देने को तैयार था, और दूसरे दिन फैसला सुनाने वाला था, परन्तु जब लड़की

को पता लगा, कि मेरे पिता मेरे पति को फांसी की सज़ा देने वाले हैं, तब वह तत्काल अपने पिता के पास चली गई और उनको कहने लगी, कि आप मुलज़िम को छोड़ दें, नहीं तो मैं भी आत्मघात कर लूंगी। बाप पर लड़की का मोह ग़ालिब आ गया और उस ने सारे फैसले को बदल दिया, और मुलज़िम को रिहा कर दिया। लेकिन जो बे इन्साफी उस ने की थी, उस को सामने लाकर उस ने अपने दिल में कहा, कि चूंकि मैं अब इन्साफ की कुर्सी पर बैठने के योग्य नहीं रहा हूं, इसलिए उस ने अपने पद से फौरन इस्तीफा दे दिया।

इस प्रकार बिरादरी की आम राय आदि के प्रलोभनों से खरीदे जाने के कितने ही दृष्टान्त सभा परिचालक ने पेश किए, जिन से पता लगता था कि एक एक जन एक एक प्रलोभन के आने पर किस प्रकार परास्त हो जाता है, और किसी सचाई वा भलाई के सामने खड़ा नहीं रह सकता। कोई नौकरी के लालच में, कोई पद के लालच में, कोई धन के लालच में और कोई रिहायश के लालच में अक्सर खरीदा जाता है।

परन्तु इस की तुलना में हमारे परम पुजनीय भगवान् देवात्मा ने अपने देव प्रभाव पहुंचाकर कितने ही ऐसे कर्मचारी और सेवक तैयार किए हैं, कि जिन को साधारणत: कोई खरीद नहीं सकता। भगवान् देवात्मा कई बार फरमाया करते थे, कि श्रीमान् भाई अमर सिंह जी और श्रीमान् मोहन देव जी को मेरे से कोई बाग़ी नहीं बना सकता। उनको कोई धन से नहीं खरीद सकता, न डर से खरीद सकता है, न वाह वाह और इज्ज़त के लालच से खरीद सकता है। भगवान् देवात्मा समझते थे, कि वह कई प्रलोभनों से ऊपर हो गए हैं। उनकी ज़िन्दगियों में प्रलोभन आए हैं, परन्तु वह इन प्रलोभनों के लिए भगवान् देवात्मा और उनके अद्वितीय काम से बागी नहीं बने। कर्मचारियों का तो क्या कहना है। बाज़ मामूली सेवकों के भीतर भी इतनी ताकत आ गई है, कि वह एक एक प्रलोभन के पेश किए जाने पर उस पर गालब आए हैं, और प्रलोभन देने वालों को उन्होंने ललकार कर कहा है, कि तुम मुझ को बेईमान नहीं बना सकते। एक बार उनके एक माननीय सेवक को एक मुकद्दमें में बीस हज़ार रुपए रिश्वत के पेश किए गए, जिस पर उन्होंने रुपयों पर लात मारी। एक और सेवक एक बहुत बड़े सरदार की ज़मीनों का प्रबन्ध करते थे, वह सरदार साहिब अपने मुरब्बे बेचना चाहते थे, खरीदने वाले साहिब भगवान देवात्मा के सेवक के पास पहुंचे, और उन को कहने लगे, कि यदि आप सरदार साहिब को अपने असर डालकर मुरब्बे सस्ते दामों पर बेचने के लिए तैयार कर सकें, तो हम आपको बीस हज़ार रुपया देंगे। इस पर उस सेवक ने बहुत दिलेरी के साथ उनको कहा, कि जिस सरदार का मैंने नमक खाया है, उसके लिए मैं बेवफा नहीं हो सकता। बीस हज़ार तो क्या, यदि तुम लाख रुपए भी दो, तो भी मैं बेईमान नहीं हो सकता।

इस प्रकार बीसियों दृष्टान्त हैं, जिन में प्रलोभनों के आने पर भगवान् देवात्मा के सेवक पक्के रहे हैं। इन दृष्टान्तों को पेश करके सभा पति जी ने उपस्थित जनों से अपील की, कि हम लोग जीवन दाता भगवान् देवात्मा की शक्ति को पाकर ऐसे बलवान हो जाएं, कि हमें दुनिया का कोई भी प्रलोभन गिरा न सके, और हम लोग दुनियां में एक ऐसा श्रेष्ठ और अनुकरण के योग्य दृष्टान्त छोड़ जाएं, जिस से भगवान देवात्मा के अति महान कार्य की विशेषता की दुनिया के दिलों में नक़श करने के याग्य हो सकें।

एक सेवक

कुछ सुन्दर झलकियां

श्रीमान पी. वी. कनल जी और श्रीमान ईश्वर सिंह जी दोनों ही देव समाज कौंसिल के मैम्बर थे। इनके अतिरिक्त और भी कई मैम्बर थे। एक दिन कौंसिल की मीटिंग में किसी विषय पर फैसला करते हुए दोनों में मतभेद हो गया। श्रीमान् कनल जी कुछ ज़ोर-ज़ोर से बोल गए और श्रीमान् ईश्वर सिंह जी के सम्बन्ध में कुछ ऐसे शब्द कह गए जो नहीं कहने चाहिए थे। कुछ समय के बाद श्रीमान् कनल जी ने महसूस किया कि मुझ से बड़ी भारी गलती हो गई। मुझे अपनी सही बात भी सम्मान-पूर्वक विनम्र शब्दों में कहनी चाहिए थी। मैं अपने एक त्यागी, सेवाकारी कर्मचारी के सम्बन्ध में जो ऊंचा बोल गया, वह मेरा व्यवहार ठीक नहीं था। उन्होंने फौरन श्रीमान् हितैषी सिंह जी को कहा-कृपया जाओ, देखकर आओ, श्रीमान् जी अपने कमरे में हैं या नहीं। श्रीमान् हितैषी सिंह जी गए और वापस आकर बताया कि कुछ देर पहले वे मोगा जाने के लिए बस अड्डा चले गए हैं। श्रीमान कनल जी ने फौरन सवारी का प्रबन्ध किया और बस अड्डे पहुंच गए जहां श्रीमान ईश्वर सिंह जी बस की प्रतीक्षा कर रहे थे। श्रीमान कनल जी ने भरे दिल और तर आंखों के साथ अपनी ग़लती का प्रकाश करके क्षमा मांगी। दोनों कर्मचारी एक दूसरे के गले से लिपट गए। दोनों ही ज़ार-ज़ार रो रहे थे। आस-पास खड़े लोग इस दृश्य को देख कर हैरान हो रहे थे कि दो बजुर्ग सज्जन किस प्रकार एक दूसरे से गले लग कर रो रहे हैं। उस समय का दृश्य देवताओं के देखने के योग्य था। जब इस घटना को याद करते हैं, तो महसूस होता है कि दोनों उच्च आत्माओं का किसी विषय पर मतभेद होते हुए भी मतभेद नहीं हुआ। आलोचना निन्दा की कैंची ने परस्पर सम्बन्ध को काटने का काम छोड़कर गुण-चिन्तन और हानि-परिशोध की सूई ने फटे दिलों को (सीने) जोड़ने का काम किया।

- - -

श्रीमान गुरुवन्त सिंह जी देव समाज के कर्मचारी थे। उन्होंने श्रीमान् नौध सिंह जी जैसे वाममार्गी तक भगवान् देवात्मा के देव प्रभाव पहुंचा कर उन्हें फ़रिश्ता इन्सान बना दिया। फ़ाजिलका उनका कार्य-क्षेत्र था। वहां पर श्रीमान बाबू अमर नाथ जी एडवोकेट भी रहते थे। उक्त श्रीमान् जी प्रचार के सिलसिले में उनके घर गए। सख़्त गर्मी का मौसम था। बाबू अमर नाथ जी ने श्रीमान् जी का हृदय-गत भावों से स्वागत किया। उन्हें बैठाया और ठण्डा पानी पीने के लिए पेश किया। अभी श्रीमान जी ने पानी पीया भी नहीं था कि उन्हें पता लगा कि उनके किसी व्यवहार से पड़ोस में रह रहे एक सेवक डाक्टर हरदयाल राय जी बहुत दुखी हैं। श्रीमान जी ने महसूस किया कि डाक्टर साहब की आत्मिक अवस्था ठीक नहीं है। वह आत्मिक विचार से बहुत अधिक बीमार हैं। जैसे कोई अपने किसी सम्बन्धी की शरीर के विचार से बहुत रोगी अवस्था को देख कर तड़प उठता है, वैसे ही श्रीमान गुरूवन्त सिंह जी आत्मा के विचार से एक सेवक को रोगी देखकर तड़प उठे। उन्होंने पानी का गिलास मेज पर रख दिया और कहा कि मैं पहले उनके घर जाता हूं। वह डाक्टर साहब के घर गए और उनसे कहा कि जरूर मुझसे कोई गलती या गलतियां हुई होंगी जिसके कारण आप मुझ से दुखी हैं। उनका दिल भरा हुआ था। उन्होंने बहुत दीन-भावी होकर डाक्टर साहब से क्षमा मांगी और अपनी पगड़ी उनके पैरों में रख दी और कहा कि गुरु महाराज ने मुझे आप लोगों की आत्मिक सेवा करने की जिम्मेदारी बख्शी है न कि आप लोगों पर हकूमत करने की। श्रीमान् जी का इतना कहना था कि डाक्टर हरदयाल राय जी का दिल पिघल गया और उनके दिल में जो दूरी थी वह दूर हो गई।

- - -

श्रीमान बख्शी रत्न चन्द जी जौहर देवरत्न के जाने के बाद देव समाज के सैक्रैट्री बनाए गए। पूजनीय

भगवान् ने उनके सम्बन्ध में फ़रमाया था, कि बख्शी जी अच्छे सैक्रैट्री हैं, अच्छे एकाऊन्टैन्ट हैं, अच्छे चिकित्सक हैं इत्यादि। वह कई वर्ष समाज के सैकैट्री रहे। वह मोगा विकासालय के अधिवेशन में लाहौर से आया करते थे। पाकिस्तान बनने के बाद वह मोगा में रहने लग गए थे। मोगा में धर्म विकासालय के छोटे साधन मन्दिर में कर्मचारियों की विशेष सभाएं हुआ करती थीं, जिन में कर्मचारी अपने अपने निज के साधन का हाल बताया करते थे। एक दिन का ज़िकर है कि बख्शी रतन चन्द जी ने अपने साधन का हाल बताते हुए कहा कि भगवान् का कार्य करने के लिए जैसी योग्यता रखने वाले आत्माओं की आवश्यकता है, उस योग्यता की मुझ में बहुत कमी है। बल्कि मैं तो यह महसूस करता हूं कि मैं और मेरे जैसे कई आत्मा भगवान् देवात्मा और अधिकारी आत्माओं के बीच में पहाड़ बन कर खड़े हुए हैं। हमारी कमियों और कमजोरियों को देख कर बहुत से जन भगवान् के कारज से दूर तो हो जाते हैं परन्तु निकट नहीं होते। यह बयान करते हुए बख्शी जी का दिल भरा हुआ था, उनकी आंखों से आंसू बह रहे थे और उन्होंने दुखी होकर अपने मुँह पर ज़ोर ज़ोर से थप्पड़ मारने शुरु किए। उस समय कौन सा ऐसा आत्मा होगा जिसने यह महसूस न किया हो कि वास्तव में ही हमारी अयोग्यता के कारण ही अधिकारी आत्मा भगवान् देवात्मा के कारज की ओर खिंच कर नहीं चले आते।

- - - -

श्रीमति सरस्वती कनल ब्राह्मण वंश की थी परन्तु भाटिया खानदान में उन्होंने विवाह किया। शादी भी तब की, जब तारा डुबा हुआ था। जब श्रीमति जी के पिता का देहान्त हुआ तो उन्होंने मृतक संस्कार देव समाज विधि से कराया। इस पर बिरादरी के लोग बिगड़ गए। उनके धर्म पति श्रीमान् कनल जी की उस समय सैंकड़ों रुपये माहवार की आमदनी वकालत में होती थी। परन्तु श्रीमति जी ने कहा कि हमें भगवान् के कारज में लगना चाहिए। कनल जी कुछ ढीले थे। एक दिन जब वह कचहरी से वापस घर आए तो देखा कि श्रीमति जी ने सामान बांध कर रखा हुआ है और लाहौर चलने की तैयारी की हुई है, जहां देवगुरु भगवान रहते थे। सन् 1918 में कनल जी लाहौर पहुंच गए। श्रीमती जी ने पहले लाहौर में दान मांगना शुरु किया। फिर सन् 1920 में वह बम्बई दान मांगने गईं और एक नया क्षेत्र बना दिया।

सन् 1921 में पहली अगस्त को श्रीमती जी के बच्चा पैदा हुआ। जब अक्तूबर में वह दान के लिए बम्बई को रवाना होने लगीं, तो भगवान् ने फ़रमाया कि बम्बई में बच्चे को यदि कुछ हो गया तो। श्रीमती जी ने उत्तर दिया कि इसकी परवाह नहीं, सेवा का काम अवश्य होना चाहिए। बम्बई में बच्चा सख्त बीमार हो गया, परन्तु राजी हो गया और वह कुशल पूर्वक वापस आ गई। सन् 1937 में जब वह बम्बई में दान का काम कर रही थीं तो वहां उनकी दूसरी कन्या पैदा हुई। कनल जी तो पंजाब आ गए परन्तु भाई अमर सिंह जी उनकी मदद के लिए बम्बई ठहरे। सन् 1941 में उनकी तीसरी बेटी सुषमा फिरोजपुर में बीमार थी। उनको साथ लेकर वह दान के लिए बम्बई गईं। बीमार कन्या को भी सम्भालती और दान भी मांगती। वहां एक दिन बारह बजे कन्या की मृत्यु हो गई। उनका संस्कार करके तीन बजे श्रीमती जी दान मांगने चल पड़ीं, जब बम्बई से पंजाब आने लगीं तो उस समय का दृश्य बड़ा दर्दनाक था। वह अपनी कन्या को बम्बई छोड़ कर पंजाब जा रही थीं।

31 मई सन् 1933 को उनका होनहार बहुत सुन्दर बेटा जो बी.ए. फाइनल में पढ़ रहा था, बीस वर्ष की आयु में गुज़र गया, परन्तु इस सदमे के बाद भी वह बम्बई में दान मांगने गईं। वहां से कराची गईं और 15 दिन वहां दान मांगा। तीस बरस उन्होंने समाज के हितकर काम के लिए हज़ारों रुपए दान मांगने का संग्राम किया और कठिन-से-कठिन परिस्थित में भी हिम्मत नहीं हारी। वह भी क्या दिन थे, उनकी यह सुनहरी यादें हैं।

राजेन्द्र बाबू के चमकदार पहलू

कांग्रेस का अध्यक्ष बनने से इन्कार, क्योंकि मुझ पर कर्ज़ा है

कांग्रेस अव्यवस्थित सी थी। राजेन्द्र बाबू की संगठन शक्ति और सेवा परायणता को पूरा देश जान चुका था। सन् 1934 का अड़तालीसवां कांग्रेस अधिवेशन बम्बई में होने जा रहा था। गांधी जी सहित कांग्रेस समिति का एक मत से फ़ैसला हुआ कि इस अधिवेशन का अध्यक्ष राजेन्द्र बाबू को बनाया जाए।

प्रस्ताव राजेन्द्र बाबू के पास आया। उन्होंने बड़ी विनम्रता से लिख दिया - "अभी मैं इस पद का भार नहीं उठा पाऊंगा।" यह बात गांधी जी तक पहुंची। गांधी जी ने राजेन्द्र बाबू जी का बुलाया और पूछा - "तुमने यह प्रस्ताव क्यों ठुकरा दिया?" राजेन्द्र बाबू ने कहा - "आप की कोई भी आज्ञा शिरोधार्य है, किन्तु मेरे सामने एक नैतिकता का प्रश्न उठ खड़ा हुआ है जिसकी वजह से अध्यक्ष पद स्वीकार करना मुझे ठीक नहीं लग रहा।"

गांधी जी ने फिर पूछा - "क्या बात है? पूरी बात तो बताओ।" राजेन्द्र बाबू थोड़ी देर चुप रहे। फिर रुक-रुक कर बोले - "कांग्रेस का अध्यक्ष ऐसे व्यक्ति को नहीं बनाना चाहिए जो कर्ज़दार हो।"

कर्ज़दार! गांधी जी अवाक् रह गए। राजेन्द्र बाबू ने आगे बताया कि अभी थोड़े दिन पहले ही मेरे बड़े भाई की मृत्यु हुई है। मुझे तो घर का आमदनी और खर्च का कुछ पता ही नहीं था। सब कुछ भाई ही देखते थे। अभी कुछ दिन पहले पता चला है कि उनके ऊपर दो लाख रुपये का कर्ज़ा चुकाना है।

गांधी जी ने सेठ जमना लाल बजाज को बुलाया। उन्होंने कर्ज़ के बारे में बताया और पूछा - क्या राजेन्द्र प्रसाद को इस भार से मुक्त कराया जा सकता है? गांधी जी का आदेश पाकर सेठ जी ने अपने मैनेजर को जीरादेई भेजा। पूरी जानकारी प्राप्त की। पता चला कि ज़िमींदारी तथा पूरी जायदाद रहन कर दी जाए और कुछ समान भी बेच दिया जाए, तभी वह कर्ज़ आसानी से चुकाया जा सकता है। किसी तरह कर्ज़ चुकाने का प्रबन्ध किया गया, तब जाकर राजेन्द्र बाबू ने कांग्रेस का अध्यक्ष पद स्वीकार किया।

'तुलसी' तुम मुझे माफ़ करो

राजेन्द्र बाबू का एक पुराना नौकर था, तुलसी। तुलसी राजेन्द्र बाबू की सेवा सम्भाल बड़े प्रेम से करता था, किन्तु कभी कभी कुछ लापरवाही भी कर बैठता था। एक दिन वह राष्ट्रपति भवन में राजेन्द्र बाबू की मेज़ साफ़ कर रहा था। उस मेज़ पर हाथी दांत का बना एक फ़ाउण्टेन पैन रखा था, जो राजेन्द्र बाबू को कहीं से उपहार में मिला था। उन्हें वह पैन बहुत प्रिय था। हमेशा वह उसी से लिखने का काम करते थे। तुलसी ने मेज़ का कपड़ा फटकार कर साफ़ करना चाहा तो पैन नीचे गिर कर टूट गया। पैन टूटने से उसकी स्याही भी नीचे गिर कर बिछे कालीन पर फैल गई।

राजेन्द्र बाबू अपने दफ़्तर में आए, यह दृश्य देखा तो तुलसी पर बहुत नाराज़ हुए। वह कई बार पहले भी इस प्रकार की असावधानियां कर चुका था। राजेन्द्र बाबू ने अपने सचिव को बुलाया और कहा - "तुलसी को राष्ट्रपति भवन में तुरन्त किसी दूसरी जगह लगा दो।" सचिव ने ऐसा ही किया।

राजेन्द्र बाबू सवेरे दफ़्तर में आते ही विदेशी अतिथियों से मुलाकात करते थे। उस दिन भी वे सबसे मुलाकात करते रहे। लेकिन बीच बीच में न जाने क्यों उनका हृदय उन्हें कचोटता रहा। उन्हें ऐसा लगता रहा कि तुलसी के प्रति उन्होंने उचित व्यवहार नहीं किया।

ज्यों ही अतिथियों की मुलाकात खत्म हुई, राजेन्द्र बाबू ने तुरन्त अपने सचिव को बुलाया और कहा- "तुलसी को बुलाओ।" तुलसी को बुलाया गया। वह बेचारा घबराया सा राजेन्द्र बाबू के सामने हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। बाबू जी बड़े दीन भाव से बोले - "तुलसी, तुम मुझे माफ़ कर दो।"

तुलसी की तो जैसे घिग्घी बन्ध गई। वह कुछ बोल न सका। राजेन्द्र बाबू बार बार कहते रहे - "तुलसी तुम मुझे माफ़ कर दो।"

अजीब दृश्य था। एक ओर हाथ जोड़े राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र बाबू, तो दूसरी ओर उसी तरह हाथ जोड़े खड़ा उनका सेवक तुलसी। राजेन्द्र बाबू फिर भी यही कहते रहे- "तुलसी, तुम मुझे माफ़ कर दो।"

तुलसी कहे तो क्या कहे। वह सोच रहा था, बाबू जी को क्या हो गया? वह हतप्रभ था। आखिर जब तुलसी ने साहस बटोर कर कुछ सान्त्वना के शब्द कहे तो राजेन्द्र बाबू को शान्ति मिली। उन्होंने तुरन्त उसे फिर उसी जगह बुला लिया और जब वह पहले की तरह काम करने लगा, तब राजेन्द्र बाबू को सन्तोष हुआ।

ऐसे थे राजेन्द्र बाबू

सरदार वल्लभ भाई पटेल का मत था कि राजेन्द्र बाबू अजात शत्रु हैं, जिनका कोई शत्रु ही पैदा नहीं हुआ। बात भी ठीक है। राजेन्द्र बाबू में क्रोध नहीं था, अभिमान नहीं था। पर यह कैसा अनोखा संयोग है कि राजेन्द्र बाबू को क्रोध आया और वह भी तब आया, जब वह सरदार पटेल के साथ बारडोली में थे।

वहां एक बार किसी त्यौहार में खीर पूड़ी का भोजन बना। राजेन्द्र बाबू भोजन कर के बाहर बरामदे में टहल रहे थे, सहसा उनकी निगाह बर्तन मांजने वाले कहार पर पड़ी। वह पत्तल में पहले दिन के बचे बासी चावल खा रहा था। राजेन्द्र बाबू पहले थोड़ी देर तो एक टक देखते रहे, फिर गरज कर ऊंची आवाज़ से अपनी सेवा शुश्रूषा करने वाले भाई शंकर पाण्डेय को बुलाया। शंकर राजेन्द्र बाबू का यह रूप देख कर घबरा गया। उन्होंने पहले राजेन्द्र बाबू को इस प्रकार क्रोध में नहीं देखा था। राजेन्द्र बाबू ने शंकर से गुस्से में पूछा- "किसने परोसे इसे रात के बासी चावल? जाओ, खीर पूड़ी की पत्तल लाओ।" राजेन्द्र बाबू ने कहार के सामने से स्वयं पत्तल उठाई। बासी चावल कुत्तों के आगे फ़ैंक दिए। जब तक खीर पूड़ी की पत्तल नहीं आ गई, राजेन्द्र बाबू की त्यौरी चढ़ी रही। राजेन्द्र बाबू में जनक, बुद्ध और गांधी की छाप थी।

पंडित जवाहर लाल कहा करते थे कि राजेन्द्र बाबू का अपनी ज़बान, दिल और क़लम तीनों पर काबू है, जबकि मेरा इन तीनों में से किसी पर भी काबू नहीं।

राजेन्द्र बाबू हमेशा नीम का दातुन करते थे। अन्त तक उनके सभी दांत सुरक्षित और मज़बूत रहे। एक बार किसी ने उनके सफ़ेद दांतों को देख कर पूछा - "श्रीमान्! क्या यह नकली दांत है?" राजेन्द्र बाबू ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया- "मेरी कोई भी चीज़ नकली नहीं है।"

संस्कृति का सच और अश्लीलता पर हल्ला

अधिकतर भारतीय जानते ही नहीं कि संस्कृति है क्या। जिसे वे अपनी संस्कृति बता रहे है, क्या वह उन की है? पश्चिम की नग्नता क्या उन की संस्कृति थी? आज का समय यही दर्शाता है कि उन्होंने अपनी जनता को कूपमंडूकता से बाहर निकाला है, जो भारतीयों को आज भी नसीब नहीं हुआ, तभी तो पश्चिम की संस्कृति को अपसंस्कृति नाम देते हैं,

संस्कृति एक व्यापक शब्द है जिससे आदमी के रहनसहन, बोलने, बात करने का तरीका, यानी हमारी पूरी दिनचर्या प्रभावित रहती है, जो लोग टीवी सीरियलों की हमारी संस्कृति के विपरीत बताते हैं, क्या उन्हें अपनी संस्कृति का पता है? शायद नहीं। क्योंकि हमारी अपनी कोई संस्कृति है ही नहीं।

हम जिसे अपनी संस्कृति मानते है, वह बाहर से आई है, बोलने, बात करने, पढ़नेओढ़ने, खानेपीने, यहां तक की भी 'सौरी', 'थैंक्यू' जैसे शब्दों का प्रयोग करने तक की भी हमें तमीज नहीं थी। आज भी सड़कों पर गाड़ी से बरसाती पानी के छींटे मारने में हमें संकोच नहीं होता, लाइन तोड़ कर टिकट खरीदने में हम अपनी शान समझते हैं, ट्रेनों में मूंगफली के छिलके फेंक कर गंदा करना हमारी संस्कृति का हिस्सा है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो हम भेड़ है। भेड़ की कोई संस्कृति नहीं होती। गड़रिया जिधर धकेलता है, हम उधर ही भागते हैं।

पढ़ालिखा तबका, जो अपने को अंगरेज की औलाद समझता है, वह भी सिर्फ दिखावे के लिए 'थैंक्यू' या 'सौरी' बोलता है, जरा सोचिए, अंगरेजों के आने से पहले, क्या हम किसी को थैंक्यू बोलते थे? क्या सौरी कहना या अपनी गलती मानना हम अपनी शान के खिलाफ नहीं समझते थे? आज भी सौरी महज औपचारिकता है वरना अपटूडेट होने के बाद भी अंदर से हम अभद्र ही हैं।

ताजमहल, फतेहपुर सीकरी, लालकिला, चारमीनार, जीटी रोड, भारतीयों की देन नहीं हैं, जिन्हें हम आपनी संस्कृति से जोड़ कर सीना चौड़ा करते हैं। आश्चर्य होता है तब, जब हम अपनी गुलामी को 'ग्लोरीफाई' करते हैं, वजह साफ है, हमारे पास अपना ऐसा कुछ नहीं है जिसे दुनिया के सामने रखा जा सके। यही वजह है जो हम गुलामी की विरासत को अपनी समृद्ध संस्कृति की विरासत से जोड़ते हैं।

हमारे पास था क्या? पंडेपुजारियों के बनाए जातपात, गोत्र, बेसिरपैर का वास्तुशास्त्र, योग, जिस का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं, महज गोत्र के नाम पर हत्या करनी हो तो रक्त की अलग परिभाषा गढ़ते हैं।

सच तो यह है कि हम जिस पत्तल में खाते हैं, उसी में छेद करते हैं, न किया होता, तो गुलामी का दंश न झेलते। विभीषण हो या कृष्ण, अपनी मातृभूमि व प्रतिबद्धता के खिलाफ काम किया, जो हमारे प्रेरणास्त्रोत व सम्मानित विभूतियां हैं, यही हमारी संस्कृति है, भ्रष्टाचार जो हमारी संस्कृति का हिस्सा है, आदर्श हाउसिंग सोसाइटी के जरिए कारगिल के सैनिकों की विधवाओं का हक मारने में भी हमारी आत्मा नहीं धिक्कारती। जबकि चौबीस घंटे आत्मारमात्मा में जीते हैं। लोग भ्रष्टाचार से लिप्त हैं। जो जहां है वहीं लूटखसोट में लगा हुआ है। इस में सब लगे हुए हैं। नेता, अधिकारी यहां तक कि आम आदमी भी इस में लिप्त है। इन में कुछ ईमानदार हो सकते हैं पर उससे

कुछ नहीं होने वाला।

मानवीय कमजोरी के इस मूल से हमारे वे धार्मिक प्रसंग हैं जो कथाओं के जरिए हम बचपन से सुनते आए हैं, राक्षसों को अमृत न मिले, इस के लिए विष्णुजी ने स्त्री का रूप धरा, जो न केवल पक्षपातपूर्ण था बल्कि भ्रष्ट आचरण का नमूना था। यह एक प्रकार का धोखा था। चाणक्य के समय में भी अपराध था। एक ही भ्रष्ट आचरण के लिए ब्राह्मणों को कम 'पण' (सिक्का) तथा शूद्रों को ज्यादा 'पण' देने का प्रावध ान था जो पक्षपात का ज्वलंत उदाहरण है। यह आज भी बदस्तूर कायम है। आज एक अरबपति भी टैक्सों की चोरी करता है। गरीबों का हम मारते है।

जिस अश्लीलता को हम अपसंस्कृति मानते हैं वही हमारी सांस्कृतिक विरासत है। खजुराहो हो या कोणार्क क्या साबित करता है? मनुस्मृति में वंश चलाने के लिए नियोग विधि से देवर के साथ संतानोत्पति करने का प्रावधान है। भीष्म अपने कामांध पिता शांतनु के लिए आजीवन अविवाहित रहने का फैसला लेते हैं। कृष्ण की 16 हजार रानियों पर कोई आपत्ति नहीं करता।

ऐसी है हमारी संस्कृति

देवदासी प्रथा खुलेआम वेश्यावृत्ति की मिसाल है, मतस्य पुराण में कहा गया है कि गैरब्राह्मण स्त्री को चाहिए कि ब्राह्मण और संतुष्ट होने तक भोजन कराए और हर रविवार को उस ब्राह्माण को संभोग हेतु अपना शरीर अर्पित करे। कृष्ण अर्जुन को अपनी बहन सुभद्रा को भगा ले जाने के लिए प्रेरित करते हैं। नगरवधू प्रथा हमारे राजाओं की देन थी जिस का मकसद था मनोरंजन व सहवास। निश्चय ही इस की प्रेरणा इंद्र देवता से मिली होगी। औरतों (अप्सरा) को नचाना व भोगना इन्हीं की देन है। शिवलिंग पूजा को किस श्रेणी में रखा जाए?

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि व्यर्थ ही हम अपने को पश्चिम से श्रेष्ठ समझते हैं। कभी जादूटोना, मदारीसपेरा, झाड़फूंक के रूप में ही हमें जाना जाता था। डायन प्रथा आज भी मौजूद है। ज्योतिश्यशास्त्र, जिस ने इस देश की लुटिया डुबोई, आज भी डुबो रही है। जादूटोना, झाडफूंक, शक्ति के लिए बेकुसूर जानवरों की बलि देने की कुप्रथा, सती प्रथा, बालविवाह, विध वा प्रथा जिस में वेश्या बनना तो मंजूर था पर पुनर्विवाह नहीं।

एक तरफ जीवनमरण ऊपर वाले के हाथ में मानते हैं, दूसरी तरफ विधवा को अपने पति की मौत का जिम्मेदार मानते हैं। खानेपीने के लिए छप्पन भोग महज कागजों पर, वरना न मुगल आते न हिन्दुस्तानी जानते कि तंदूरी रोटी होती क्या है, स्थापत्य कला की बारीकी मुगलों की देन है। संगीत के अनेक वाद्ययंत्र पश्चिम एशिया से आए, चिकन कला पश्चिम एशिया से आई।

अंगरेज आए तो उन्होंने दाड़ी व बाल काटना सिखाया। पतलूनकोट पहनना सिखाया। कांटाचम्मच उन्हीं की देन है। हायहैलो उन्होंने ही सिखाया। हाथ मिलाना उन्हीं से सीखा।

जिस गालीगलौज को हम अपनी संस्कृति के खिलाफ समझते हैं। दरअसल, वही हमारी संस्कृति का शुद्ध पत्र है। बंद दीवारों के बीच शौच करना अंगरेजों ने ही सिखाया। हम तो खेतों में जानवरों की तरह बैठते थे। आज भी देश को काफी आबादी खेतों या रेलवे की पटरी के किनारे इत्मीनान से हमारी समृद्ध संस्कृति की विरासत को दर्शाती है। तथाकथित सभ्य समझने वाले भारतीय जब ट्रेनों के एसी डब्बे में सफर करते हैं, तो गरीबों को देख कर नाकभौं सिकोड़ते हैं, जबकि कभी इस जगह पर उन का अतीत था।

गोपाष्टमी को गाय पूजते हैं, रोजाना सूई

कोंच कर दूध दुहते न ग्वाले को खयाल आता है, न खरीद कर पीने वालों को कि गाय हमारी माता है। जानवर ही मानें पर पूजने का पाखंड तो न करें, जान बचानी हो तो खून का ए-बी देखते हैं, पर जब महिलाएं पुत्र के दीर्घायु के लिए सूर्य देवता को अर्घ्य देती हैं, क्या इस से शिशु मृत्युदर में कमी आई? आज भी वह दूसरे देशों की तुलना में भारत में सब से ज्यादा है। क्या अब भी हमें अपनी श्रेष्ठ संस्कृति पर गर्व करने के लिए कुछ बचा है? झूठ बेईमानी, भ्रष्टाचार, कपट, ईर्ष्या, भाईभतीजावाद ही हमारी पहचान है। बेहतर होगा इन से निबटें।

(सरिता से संभार)

मुझ पर महा हानिकारक अहं का अधिकार

(1)

मेरे नेता और हितकर्ता सतगुरु!

भगवन! आपके साथ योग के यतकिंचित साधन से वा ऐसे साधन के लिए संग्राम करने से मुझे पता लगता है कि

(1) जैसे गर्दो गुबार और धुएं के भीतर चीज़ें साफ तौर से दिखाई नहीं दे सकतीं और नहीं देतीं, वैसे ही जब तक मेरे भीतर से अहं का धुआं बिलकुल दूर न हो, तब तक मैं क्या अपने और क्या आपके विषय में असल हक़ीक़त को नहीं देख सकता। और क्या मेरी अपनी असल तस्वीर और क्या आप का असल रूप मेरी निगाह से छिपा रहता है।

(2) मेरे भीतर यह अहं का धुआं जिन जिन अवस्थाओं में पैदा होता है वा फैलता है वा मुझे आवृत करता है, वह यह है :-

(क) मैं जब अपनी एक वा दूसरी सुख वासना वा रुचि की तृप्ति के लिए व्याकुल होता हूं, अथवा उसका मुझ पर आधिपत्य होता है;

(ख) जब मैं खुद दिल में अपनी प्रशंसा करूं, अथवा कोई और मेरी प्रशंसा करता हो;

(ग) जब कोई मेरी निंदा करता हो, अथवा मेरी निस्बत कोई ऐसी बात कहता हो, जिसको मैं सच न समझता हूं;

(घ) जब कोई मेरा सचमुच का दोष भी कि जिसे मैं देख वा परित्याग कर चुका हूं, मुझ पर बार बार ज़ाहिर करता है;

(ड़) जब किसी की ऐसी स्तुति होती हो, कि जिसे मैं ठीक नहीं समझता इत्यादि;

मैं इन सब कारणों को सम्मुख रखकर मालूम करता हूं कि इन सब में मेरा अपना अहं ही मेरे हृदय पर आधिपत्य करता है, और इसलिए मैं

(1) अपने सुख को मुख्य और सत्य और हित को गौण रखता हूं;

(2) अपनी समझ को ही मुख्य रखता हूं और किसी और की समझ को उचित वज़न नहीं देता;

(3) अपनी नीचता और हीनता के बार बार सम्मुख आने और उससे घृणा बढ़ाने में किसी और से मदद हासिल करना नहीं चाहता;

(4) अपनी किसी अदना खूबी की चिंता वा उसका श्रवण भी मुझे आकृष्ट करता है। इत्यादि;

भगवन! मैं अपने भीतर के इन सब अंधकार-उत्पादक कार्यों को बार बार सम्मुख लाकर उनसे उद्धार लाभ करना चाहता हूं। मैं उन्हें बार बार सम्मुख लाकर उनके विषय में अपने ज्ञान को बढ़ाना और उनकी तस्वीर को ज़्यादा से ज़्यादा साफ तौर से देखना और उन्हें दूर करके अपने हृदय को उनके

विकार से शुद्ध करना चाहता हूं। मुझे ऐसे साधनों में कृतकार्यता लाभ हो क्योंकि तभी मुझे आपका प्रकृत देवरूप नज़र आ सकता है और उसके लिए कोई अनुराग मेरे भीतर पैदा हो सकता है। ऐसा हो, कि मैं अपने इन साधनों को भलीभांत पूरा कर सकूं।

- आपका दीन हीन एक सेवक

(2)

मेरे परम हितकर्ता भगवन!

एक ओर आपके महादानी रूप को सम्मुख लाकर और दूसरी ओर आपके दर के टुकड़े खाकर दीन बनने के स्थान में अभिमानी रूप को सम्मुख लाकर हृदय व्याकुल और दुखी हो रहा है। एक ओर मैं देखता हूं कि मुझ हर तरह से कंगाल की पालना आपके दर से होती है- आपके द्वार से यदि कोई ज्योति की किरण मिलती है, तो मेरे अंधकारग्रस्त आत्मा में कुछ उजाला होता है, यदि आपकी ज्योति प्राप्त होती है, तो मुझे अपना आप किसी अंश में दिखाई देता है, यदि आपकी ज्योति प्राप्त होती है, तो अपना विविध गतियों की और विविध अस्तित्वों के साथ अपने संबंध की हालत मुझे नज़र आती है, यदि आपके उच्च प्रभाव मेरे हृदय तक पहुंचते हैं तो मेरे हृदय में एक वा दूसरा उच्च भाव उद्दीपित होता है, यदि आपकी शक्ति मुझे हिलाती है, तो एक वा दूसरा उच्च कार्य करने और उसके लिए हरकत में आने का भाव पैदा होता हैं, इत्यादि - और इस प्रकार मैं अनुभव करता हूं कि आप मुझ महा कंगाल के कितने बड़े दानी प्रभु और उपकारी गुरु हैं। दूसरी ओर मैं अपने नीच रूप को सम्मुख लाता हूं, कि मैं कदम कदम पर आपकी सहायता का मोहताज और अपके दर से मिले हुए जीवन के टुकड़ों को खाकर जीने वाला अनेक बार अकड़ता हूं, अनेक बार वास्तव में (Practically) अपने आपको बड़ा और आपको छोटा, अपने आपको सयाना, आपको अनजान आदि समझता हूं, और दिल दिल में इस प्रकार की चिंता की गति रखकर अपने आपको काला बनाता रहा हूं। भगवन! अपनी ऐसी तस्वीर मुझे कल दिन में और आज प्रातः काल के साधन में बहुत दुखी करती रही है। आज आपकी छवि को सम्मुख रखकर और आपके साथ योग का साधन करते समय अपने इस नीच रूप को सम्मुख लाकर मेरे भीतर बहुत ही शर्मिंदगी का भाव पैदा होता रहा। कल रास्ते में चलते समय आपका जप करते करते जब अपनी ऐसी अवस्था का दृश्य सम्मुख आया, तब बहुत दुख होने लगा, और ऐसा प्रतीत होने लगा कि जैसे कोई अति कंगाल परंतु बहुत कमीना आदमी जहां से भीख मांगकर टुकड़े खाता हो, वहीं पर अपनी अकड़ दिखाता हो, वैसा ही ठीक मेरा हाल है। जहां से मेरा ज्ञान, जहां से मेरी बुद्धि का विकास, जहां से मेरे एक एक उच्च भाव की उत्पत्ति और रक्षा और उन्नति, हाय मैं महा कमीना और कंगाल और दुष्ट जीव वहां ही अपनी अकड़ और अपने नीच अहं का प्रकाश करता रहा हूं और अपनी कितनी चिंताओं और बातों और क्रियाओं में अपने इस कमीनापन का और हानिकारक चाल का सबूत देता रहा हूं। भगवन! ऐसी नीच छवि सम्मुख आकर मुझे इस समय बहुत दुखी कर रही है, और बार बार ऐसी कामना पैदा होती है कि एक ओर जिन हालात के पैदा होने पर मेरी इस महा कमीना और रद्दी प्रकृति को भड़कने का अवसर मिलता रहा है, वह हालात पैदा न हों, और मैं उनसे बचा रह सकूं, और दूसरी ओर मैं अपनी इस नीच प्रकृति को दमन करने और अपनी असल हैसीयत को भलीभांत देखने और उपलब्ध करने के साधन कर सकूं और आपकी असल महिमा और आपके साथ अपने संबंध की असल हकीकत को ज़्यादा से ज़्यादा देख सकूं।

द.स.

महा कंगाल

Published on 5th of the month
20
Regd. Postal No.CHD /0077/ 2018-2020
Regd. with Registrar News Paper No. 72258/88

महा नीच और अधम आत्माओं के हाथों में उच्च कार्य नहीं रखवा जा सकता

"..... ज़हनी तौर से अगरचे अब भी मनुष्य यही समझता है कि रुहों को देव गुरु के साथ जोड़ कर उनका उद्धार करने के लिए ही उस की ज़िन्दगी और उस की कुल ताकतें हैं, बज़ाहर इस मक़सद को पूरा भी करना चाहता है ओर उसके लिए अपने इस मकसद की अपीलें भी करता हैं ओर इस मतलब के भजन और पाठ भी करता है मगर अन्दर वो भूख मौजूद नहीं होती, वो बेक़रारी नज़र नहीं आती, कि जिस से सच मुच रुहों का उद्धार हो सके और वो देव गुरु के साथ जुड़ कर पिशाचत से निजात पा सकें। नतीजा क्या होता हैं? दिन पर दिन, हफ्ते पर हफ़्ते, और महीनों पर महीने (सालों पर साल) गुज़र जाते हैं, और कोई रुह सचमुच देव गुरू के साथ जुड़ कर पिशाचत से निजात नहीं पाती, और उस की ज़िन्दगी सच्चे मानों में कुछ नतीजा ख़ेज़ साबित नहीं होती.....।

"..... ऐसे शक्स जो किसी भली इन्स्टीटयूशन या भले काम का चार्ज ले कर अपने एक या किसी दूसरे सुख अनुराग के दास हो कर उसे पतन या बर्बादी या तबाही के रास्ते पर ले जाते है वा महा नीच और अधम होते हैं, वो अपने ऐसे पाप कर्मो से पतित होते-2 अपने आत्मिक जीवन बल को इस कदर नष्ट कर लेते है कि उन के यह महा पाप खुद पुकार पुकार कर रात दिन शहादत देते हैं। ऐसे करतब और परोपकार भावों के काफ़ी प्रेम से वंचित आत्माओं के हाथों में किसी भी परोपकार विषयक काम या इन्स्टीटयूशन का रहना या रखना कभी भी जायज़ नहीं हो सकता.. ..... कि जो अपने नीच सुखों की गुलामी के बैयस किसी परोपकार विषयक काम या इन्सटीटयूशन का चार्ज ले कर एक तरफ़ उस में कोई सच्ची कामयाबी नहीं दिखा सकते और दूसरी तरफ़ एक या दूसरी किस्म के ओहदेदार बन जाने और कहलाने के लालच से किसी ऐसे चार्ज के लेने से इन्कारी भी नहीं बनते हैं। काश! कि देव समाज की ऐसे जनों से सुरक्षा हो सके।

जो शख्स एक विभाग का चार्ज लेने के लायक नहीं वो सारी समाज को क्या चलायेगा?

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए, (लाईफ़ वर्कर) मंत्री-देव-धर्म-मिशन, प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक "धर्म जीवन" ने ***Surya Laser Den, Chandigarh*** *से छपवाकर म. नं. 3154, सैक्टर 21-डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।*

Book Posts